# पल्लव शासन व्यवस्था

सात सौ वर्षों के निरंतर पल्लव शासन ने दक्षिण भारत को एक सुसंगठित प्रशासनिक व्यवस्था प्रदान की। पल्लवों का भारतीय शासन पद्धति में सबसे महत्वपूर्ण योगदान था - ग्रामीण शासन व्यवस्था। इस व्यवस्था की नींव पल्लवों ने रखी थी जिसका पूर्ण प्रस्फुटन चोल काल में हुआ और यही अनवरत रूप से ग्राम्य जीवन को 19वीं सदी तक कुशलतापूर्वक संचालित करती रही।

पल्लवों में राजत्व को ईश्वरीय और वंशानुगत माना जाता था और वे अपनी उत्पत्ति ब्रह्मा से मानते थे। राजपद के लिये चुनाव का भी एकाध जगह उल्लेख मिलता है लेकिन यह तभी सम्भव हुआ जब वंशानुगत उत्तराधिकारी कोई नहीं होता। पल्लव राजा बड़ी-बड़ी उपाधियाँ धारण किया करते थे यथा- महाराजाधिराज, धर्ममहाराजाधिराज एवं अग्निष्टोम, वाजपेय, अश्वमेध याजी आदि। शासन का केन्द्र बिन्दु राजा था। राजा की अधीनता में कई सामन्तीय एवं करद राज्यों के राजा शासन किया करते थे। दरअसल अन्य तत्कालीन शासकों एवं शासन व्यवस्थाओं की तरह ही पल्लवों के समय भी सामन्त पद्धति का विकास हो गया था। महाराजाधिराज के अधीन बहुत से छोटे बड़े सामन्त राजा होते थे जो अपने अपने क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से शासन करते थे। इन सामन्त राजाओं की अपनी सेना होती थी, इनका अपना राजकोष होता था। राजा की सहायता के लिए मंत्रियों का एक समूह होता था जो राज्य की नीति निर्धारित करने में मुख्य भूमिका निभाता था। प्राचीन प्रणालियों के अनुसार अनेक अध्यक्षों और राजपुरुषों के अधीन सारा केन्द्रीय और प्रांतीय शासन संगठित था। प्रमुख अधिकारियों में राजकुमार, युवराज (प्रान्तीय शासक) अमात्य, राष्ट्रिक (प्रांत/जिले के अधिकारी) देशाधिकृत (स्थानीय संरक्षक) ग्राम भोजक (गाँव का मुखिया) गौल्मिक (सेनानायक) दूतक, संजरतक (गुप्तचर)

एवं भद्रमनुष्य (सैनिक) थे। कुछ मंत्रियों को अर्द्धराजसी उपाधियाँ प्राप्त थी और बहुत सम्भव है कि इन मंत्रियों की नियुक्ति सामन्तों से की जाती थी।

प्रशासनिक सुविधाओं के लिये साम्राज्य को कई भागों में बाँट गया था।

साम्राज्य — राष्ट्र/मंडल — कोट्टम — नाडु — ग्राम

प्रधान-राजा
राष्ट्र-राष्ट्रिक
मंडल-मांडलिक

शासन की छोटी इकाई कोट्टम, नाडु और ग्राम थे। जिनके अधिकारी देशातिकाद और वापिग कहलाते थे। पल्लव सैन्य संगठन के बारे में विशेष जानकारी नहीं हो पायी है पर उनकी विजयों से पता चलता है अवश्य ही सैन्य व्यवस्था उच्च कोटि की रही होगी। सेनापति और नायक सैन्य विभाग का मुख्य अधिकारी होता था। प्रांत के अधिकारियों को परामर्श तथा सहयोग देने के लिये जिलों के अधिकारी होते थे जो स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के घनिष्ठ सहयोग से मुख्यतः परामर्शदाता के रूप में कार्य करते थे। इन संस्थाओं की स्थापना संभवतः वर्ण और व्यवसाय, स्थानीय संबन्धों और धार्मिक आसक्ति के आधार पर की जाती थी। इन संस्थाओं के कार्य संचालन के लिये प्रायः सभायें अथवा बैठक होना अनिवार्य था।

पल्लव कालीन ग्रामीण व्यवस्था काफी उन्नत थी। प्रारंभिक पल्लवकाल में स्वयंसंचालित एवं स्वयंशासित संस्था ही ग्रामीण कार्यों को नियंत्रित करते थे। बाद के वर्षों में सभा का उद्भव हुआ। तबसे गाँव का समस्त आर्थिक, सामाजिक, प्रशासनिक एवं न्यायिक कार्य ग्राम सभा स्वयं सम्पन्न करती करने लगी। स्थान और काल भेद से ग्राम सभाओं के संगठन भी भिन्न-भिन्न प्रकार के थे। कुछ ग्रामों के ग्राम सभाओं में, वय के सब वयस्क (बालिग) पुरुष सदस्य के रूप में शामिल होते थे। कुछ ग्राम ऐसे भी थे जिनमें सभी वयस्क पुरुषों को ग्राम सभा की सदस्यता का अधिकार नहीं होता था। ग्राम सभा की बैठक प्रायः

मंदिर में या वृक्ष की छाया में होता था। इनका स्वरूप छोटे-छोटे राज्यों के समान था इसलिये वे प्रायः उन सब कार्यों को करती थी, जो राज्य किया करता था। उत्पन्न विवादों एवं अभियोगों का फैसला करना, मंडी एवं बाजार का प्रबंध करना, टैक्स वसूलना, ग्राम के लाभ के लिये नये कर लगाना, ग्रामवासियों से ग्राम के हित में काम लेना, जलाशयों, उद्यानों, खेतों, चारागाहों एवं मैदानों की देख-रेख करना, मार्गों को ठीक हालत में रखना आदि कार्य ग्राम संस्थाओं के जिम्मे था। दुर्भिक्ष आदि प्राकृतिक विपत्तियों के समय ग्राम सभाओं का उत्तरदायित्व बहुत बढ़ जाता था। शिक्षा आदि के लिये धन खर्च करना भी सभा का महत्वपूर्ण कार्य था। ग्राम से राज्य के लिये करों को एकत्र करना भी ग्राम सभा का ही कार्य था। ग्राम सभा के अधिकारियों का यह कर्तव्य होता था कि वे राजकीय करों को वसूलें, उनका सही-सही हिसाब रखें और एकत्र धन को राजकोष में पहुँचा दें। ग्रामसभा और सरकारी प्रशासन के बीच की कड़ी मुखिया था जो ग्राम का नेता होने के साथ साथ प्रशासन और ग्राम के बीच मध्यस्थ का कार्य भी करता था। ग्राम सभा को कुछ न्यायिक अधिकार भी प्राप्त था। ग्राम न्यायालय साधारण अपराध के मामले निपटाता था। उच्चतर स्तर पर नगरों एवं जिलों में न्यायालयों की अध्यक्षता सरकारी अधिकारी करते थे और राजा ही उच्चतम न्यायालय था। मुख्यतः सभा एक औपचारिक संस्था थी परन्तु वह समस्त ग्राम के एक अनौपचारिक सम्मेलन उर के साथ मिलकर काम करती थी। इसके ऊपर एक जिला परिषद थी जो नाडु के साथ मिलकर अथवा जिला प्रशासन के साथ मिलकर कार्य करती थी।

ग्रामसभा के शासनकार्य की सुविधा के लिये अनेक समितियाँ भी कार्य करती थीं जिन्हे विविध प्रकार के कार्य सुपुर्द रहते थे। ये विभिन्न समितियां थीं- दान की व्यवस्था करने वाली समिति, जलाशय की व्यवस्था करने वाली समिति, उद्यानों का प्रबंध करने वाली समिति, सुवर्ण एवं कोष की व्यवस्था करने वाली समिति, मंदिरों का प्रबंध करने वाली समिति निरीक्षण समिति आदि। समिति की सदस्यता के लिये यह आवश्यक था।

कि न्यूनतम आयु 35 और अधिकतम आयु 70 वर्ष थी, ईमानदार हो, कुछ निश्चित संपत्ति रखते थे। विविध समितियाँ किस ढंग से अपने-अपने कार्य करें इसके भी नियम बनाये गये थे। ग्राम के सब योग्य व्यस्क पुरुषों को सदस्यता का अवसर मिले इसके लिये यह नियम बनाया गया था कि केवल उन्हीं पुरुषों को सदस्यता के लिये उपयुक्त व्यक्तियों की सूची में शामिल किया जाये, जो पिछले तीन वर्षों में कभी किसी समिति के सदस्य न रहे थे। इसमें संदेह नहीं कि ग्राम संबंधी संस्था की विविध समितियों के सदस्यों की नियुक्ति का यह ढंग बहुत ही उत्तम और निरापद था। इन स्वायत्त संस्थाओं के रूप में पल्लवों की देन अविस्मरणीय है।

सैद्धान्तिक रूप से राजा भूमि का स्वामी था। ग्राम तीन श्रेणियों में विभाजित थे। अन्तर्जातीय जनसंख्या वाले सर्वाधिक ग्राम थे। ये ग्राम भूराजस्व के रूप में राजा को कर देते थे। दूसरे ब्रह्मदेय ग्राम थे। इनमें पूरा ग्राम किसी एक ब्राह्मण या ब्राह्मण समूह को दान में दी गई थी जो करमुक्त था। तीसरे देवदान ग्राम होते थे जो पहली श्रेणी के ग्रामों के अनुरूप होते थे, केवल इतना अन्तर था कि इनका राजस्व किसी मंदिर को दान कर दिया जाता था और मंदिर के अधिकारियों द्वारा ही भूराजस्व संग्रह किया जाता था। पल्लव काल में अधिकांशतः ग्राम प्रथम दो श्रेणियों (अन्तर्जातीय एवं ब्रह्मदेय) के ही थे। एक विशेष प्रकार की भूमि एरिपत्ति अथवा श्रीपती भी थी जो जलाशय की भूमि थी, जो व्यक्तिगत लोगों द्वारा दान में दी गयी थी।

पल्लवों की राजकीय आय के स्रोत की जानकारी ताम्रपत्र अभिलेखों से होती है। एक ताम्रपत्र के अनुसार पल्लव नरेशों द्वारा दान दिये गये गाँवों को छोड़ अन्य से 18 प्रकार के कर वसूलते थे। कृषक अपनी उपज का 1/6 भाग से 1/10 भाग भूराजस्व के रूप में राज्य को देते थे। कासाकुडी, कुरम अभिलेख से ज्ञात होता है कि स्थानीय उत्पादित वस्तुओं तथा विभिन्न प्रकार के व्यवसायों पर शुल्क लगता था। मंडियावोलु अभिलेख

से ज्ञात होता है कि नमक उत्पादन पर राजकीय एकाधिकार था। दुर्भाग्य-वश इन सारे करों की दर ज्ञात नहीं है। पल्लव शासन व्यवस्था एक चिन्द्रणीय है कि पल्लव राजकीय आय का बड़ी कुशलता से खर्च करते थे।

इस तरह हम देखते हैं कि पल्लवों ने दक्षिण भारत में एक सुव्यवस्थित शासन व्यवस्था को जन्म दिया जो वस्तुतः केन्द्रीकृत प्रशासन एवं ग्रामीण स्वायत्तता का सुन्दर समन्वय था।

-o-